P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

जनजातीय क्षेत्रों में नक्सलवाद का फैलता दायरा

नीतू चौधरी
व्याख्याता,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
टोंक

सारांश

नक्सलवाद कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के उस आंदोलन का अनौपचारिक नाम है जो भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ। नक्सल शब्द की उत्पत्ति बंगाल के छोटे से गाँव नक्सलवाड़ी से हुई है जहाँ भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता चारू मजूमदार और कानू सान्याल ने 1967 में सत्ता के खिलाफ एक सशस्त्र आंदोलन की शुरूआत की। चारू मजूमदार चीन के कम्युनिस्ट नेता माओत्से तुंग के बड़े प्रशंसक थे। इसी कारण नक्सलवाद को माओवाद भी कहा जाता है। उनका मानना था कि भारत के मजदूरों और किसानों की जो दुर्दशा हो रही है, उसके लिए सरकार और सरकार की नीतियां जिम्मेदार है।

भूमि अधिग्रहण को लेकर सबसे पहले आवाज नक्सलवाड़ी से ही उठी थी। आंदोलनकारी नेताओं का मानना था कि 'जमीन उसी की जो उस पर खेती करे। इस आंदोलन का ही प्रभाव था कि 1977 में पहली बार पश्चिम बंगाल में कम्युनिस्ट पार्टी सरकार के रूप में आयी और ज्योति बसु मुख्यमंत्री बने।

सामाजिक जागृति के लिए शुरू हुआ इस आंदोलन पर कुछ सालों के बाद राजनीति का वर्चस्व बढ़ने लगा और आंदोलन जल्द ही अपने मुद्दों और रास्तों से भटक गया।

नक्सलवादी समस्या से निपटने के लिए सरकार के लिए जरूरी है वहाँ पानी, बिजली, स्कूल, अस्पताल और सड़क जैसी बुनियादी जरूरतों को ध्यान में रखें। वहाँ के लोगों को समाज की मुख्य धारा में लाने की कोशिश की जाएं और रोजगार उपलब्ध करवाये जाये। बंदूक के बल पर नक्सलवाद को खत्म नहीं किया जा सकता, इसके लिए सरकार की नीतियाँ और नियत दोनों में फर्क नहीं होना चाहिए क्योंकि हिंसा किसी भी समस्या का समाधान नहीं है।

मुख्य शब्द : नक्सलवाद, सामाजिक,जनजातीय क्षेत्र

प्रस्तावना

भारत एक विशाल देश है। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्राकृतिक क्षेत्र एवं प्रान्त अपनी विविधता के साथ विद्यमान है। आज भारतीय सुरक्षा को एक नहीं अनेकानेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। नक्सलवाद, भारत की आंतरिक सुरक्षा के समक्ष सबसे बडी समस्या के रूप में उभरकर सामने आया है। नक्सलियों को जंगल, जमीन से बेदखल कर दिया गया लेकिन विस्थापन कहीं नहीं किया गया। आज भी नक्सली क्षेत्र आधारभूत संरचना, यातायात, सड़क, स्वच्छ पानी, आवास, बिजली, स्वास्थ्य व शिक्षा जैसी प्राथमिक सुविधाओं से वंचित है।

भारत में नक्सलवाद का उदय व्यवस्था के पुननिर्माण को लेकर विकसित हुई एक निश्चित उग्रपंथी विचारधारा की परिणति है। नक्सलवाद एक विचारधारा है, जो मुख्यतः वर्ग–संघर्ष पर आधारित है। यह पिछड़े, दलितों व शोषितों का शोषक वर्ग के विरूद्ध किया गया एक सशस्त्र विद्रोह है जिसका मूल कारण सामाजिक आर्थिक शोषण है। नक्सलवाद आज देश के लगभग 22 राज्यों के 220 जिलों में फैल चुका है। इसमें मुख्यतः वे इलाके हैं जो कि विकास के क्षेत्र में उपेक्षित रहे हैं। छत्तीसगढ, झारखण्ड, बिहार, उड़ीसा एवं आंध्रप्रदेश नक्सल गतिविधियों के मामले में अग्रणी राज्य है। क्षेत्रफल के हिसाब से देखा जाए तो लगभग 92 हजार वर्ग किलोमीटर यानि देश का करीब 40 फीसदी इलाका नक्सलवादियों के प्रभाव में है। कई जगह समानान्तर सरकारें चल रही है। वहाँ शासन–प्रशासन पंगु बनकर रह गया है। यह एक आंदोलन है, जिसके बारे में दावा किया जाता है कि इसका उद्देश्य गरीबों, शोषितों को न्याय दिलाना है, परन्तु नक्सलवाद आतंकवाद का रूप लेता जा रहा है। गरीब किसान आदिवासी पिसता जा रहा है। देश में हर तरफ लूट मची है। पूंजीपतियों से लेकर नेता और अफसर सब लूट रहे हैं। आदिवासियों के सारे प्राकृतिक

संसाधनों का दोहन कर लिया गया है। सरकार ने खनिजों को निजी हाथों में सौंप दिया है। जंगल से आदिवासियों को भगाया जा रहा है। किसानों की जमीनों को छीना जा रहा है। आदिवासियों के मुँह से निवाला छीन लिया जा रहा है। ऐसे में उनकी सुनने वाला कोई नहीं है। जब उनकी बात ही कोई नहीं सुनेगा। दण्डित, मजबूर, शोषित, अन्याय को सहने वाला ही हथियार उठाता है। नक्सली आंदोलन के कारण क्षेत्र का विकास भी नहीं हो पा रहा है, क्योंकि ऐसे माहौल में सरकार अपनी विकास योजना वहाँ लागू नहीं कर पाती।

साहित्यावलोकन

चारू मजूमदार ने अपनी पुस्तक 'संग्रहित रचानाएं' समकालीन प्रकाशन, पटना में 1956 से 1967 के पूर्वार्द्ध तक उनके द्वारा लिखे गये आठ दस्तावेज दिए हुए हैं जो उन्होंने सामाजिक–जनवादियों खासकर सीपीआई (एम) के खिलाफ लिखे थे। चारू मजूमदार का समूचा सोच–विचार भारत के मेहनतकशों की मुक्ति पर केन्द्रित था।

बंशीधर मिश्र ने 'सभ्यता का संकट' नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998 में यह दर्शाने का प्रयास किया है कि विकास का मौजूदा मॉडल भस्मासुरी है। विकास के नाम पर विनाश लीला जारी है, जिसके चलते हमारा अस्तित्व संकट में है। इसलिए अब घडी आ गयी कि मनुष्य विकास और अस्तित्व में किसी एक को तत्काल चुने क्योंकि दोनों साथ–साथ चलने वाले कतई नहीं है। उसकी जिजीविषा या सृजनशीलता निश्चय ही अस्तित्व की कीमत पर विकास का वरण नहीं करेगी।

एम.एम.अंसारी ने 'सोशल जस्टिस एण्ड क्राइम इन इण्डिया' सबलाइम पब्लिकेशन्स जयपुर 1996 में सामाजिक न्याय की परिभाषा के साथ यह बताया गया है कि सामाजिक न्याय शैली को नियंत्रित किया जा सकता है। जनजातियों के पिछड़े हुए लोगों को उनके अधिकार एवं आर्थिक सहायता देकर उन्हें अपराध के रास्ते में जाने से रोका जा सकता है। किसी योजना की शुरूआत से पूर्व उन्हें पुनर्वास का कार्य पूरा करना चाहिए। पुस्तक के अंत में लेखक आशावादी है कि इन अपराधों की समाप्ति होगी।

लक्ष्मीधर मिश्र ने 'वंचितों की व्यथा' मानक पब्लिकेशन्स प्रा.लि. नई दिल्ली, 1997 में देश के अंसगठित श्रमिकों, उपाश्रित वर्गों के सामाजिक भेद, आर्थिक वंचन का संवेदनशील चित्रण है। इस पुस्तक में साक्षरता और शिक्षा के जरिये जागरूक बनाने का प्रयास किया गया है। ताकि वे सामूहिक कार्यवाही के माध्यम से अपने को न सिर्फ समर्थ बना सके बल्कि राष्ट्रीय मूल्यों को आत्मसात कर सके।

जितेन्द्र प्रसाद ने 'ट्राइबल मूवमेन्ट इन इण्डिया' रतन प्रेस, नई दिल्ली 2005 में शोषण के तरीकों एवं ढाँचो के वर्णन के साथ आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक दृष्टि से प्रभुत्वशाली वर्गों द्वारा कमजोर तबके पर शासन करने का वर्णन है। भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के द्वारा फैलाये गये जमींदारी प्रथा के कारण आज भी जन–जातियों के लोगों का शोषण हो रहा है। आज भी इन्हें भूमि, संस्कृति के अधिकार नहीं मिल पाये है। राजनेता इस पर राजनीति कर रहे है। अगर देश का समग्र विकास करना है तो सभी जनजातियों को उनके अधिकार देने होंगे।

सुदीप चक्रवर्ती ने अपनी कृति 'रेडसन : ट्रेवल्स इन नक्सलाइट कंट्री' पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली, 2008 मे नक्सलवाद से प्रभावित क्षेत्रों की स्थिति, समस्याएँ, माओवादियों एवं सरकार की रणनीति, विकास नक्सलवाद के फैलाव के कारण, सुरक्षा बलों के उत्पीड़न, कुशासन आदि समस्याओं का स्वयं के भ्रमण द्वारा आंकलन किया है।

भारत में नक्सलवाद की समस्या एवं आंदोलनों को औपनिवेशिक काल से समझा जा सकता है। भ्रष्टाचार और अत्याचार के हथियारों से लैस औपनिवेशिक शासन ने आदिवासियों के क्षेत्रों में घुसपैठ की, उन पर कर लगाए गए। आदिवासी क्षेत्रों में इन बाहरी लोगों की घुसपैठ ने उनकी पूरी सामाजिक व्यवस्था को ही पलट दिया। जंगलों से उनके गहरे रिश्ते को समाप्त कर दिया, उन पर जंगली भूमि, वन उत्पादों आदि के इस्तेमाल पर अंकुश लगा दिया। 18 वीं सदी से लेकर 20 वीं सदी के मध्य तक समय–समय पर जल, जंगल को लेकर हुए आदिवासी व किसान (संथाल विद्रोह, मुंडा विद्रोह, भूमकाल, भील विद्रोह, तेभागा आंदोलन आदि) इसके उदाहरण है।[1]

स्वंतत्र भारत के दो दशक ऐसे आंदोलनों से काफी प्रभावित रहे हैं, क्योंकि पंचवर्षीय योजना में भारी पैमाने पर विस्थापन हुआ था। यह वह समय था जब बाँधो के निर्माण, इस्पात कारखानों की स्थापना, खनिज सम्पदा के उत्खनन, जल–विद्युत परियोजना आदि के युद्ध स्तर पर अभियान चलाए गए थे। इस अभियान के फलस्वरूप दक्षिण बस्तर के बैलाडीला क्षेत्र में मशीनीकृत लोहा खदान, दुर्ग के भिलाई क्षेत्र व रांची में इस्पात कारखाने, पंजाब में भाखड़ा–नांगल बाँध, आँध्रप्रदेश में नागार्जुन सागर, राजस्थान में राजस्थान नहर, उत्तर प्रदेश में टिहरी बांध, उड़ीसा में राउरकेला इस्पात कारखाना, बहुराज्य नर्मदा बाँध परियोजना जैसी बहुआयामी योजनाऐं अस्तित्व में आई इन योजनाओं को अमली रूप देने के लिए जल, जंगल, जमीन तीनों ही आवश्यक थे। इसलिए स्वतंत्र भारत की राजसत्ता ने प्रत्येक माध्यम से इस अभियान में हस्तक्षेप किया और करोड़ो की संख्या में लोग प्रभावित हुए।[2]

शुभ्रांशु चौधरी ने अपनी रचना ''लेट्स काल हिम वासुः विद द माओइस्ट इन छत्तीसगढ़'' पेन्गुइन बुक्स, नई दिल्ली 2013 में छत्तीसगढ़ के माओवादी क्षेत्रों में स्वयं के भ्रमण के आधार पर यहाँ की स्थिति उत्पीड़न, विरोध, सरकार की रणनीति आदि विषयों की चर्चा की है।

संतोष पाल ने अपनी पुस्तक ''द माओइस्ट मुवमेंट इन इंडिया : पर्सपेक्टिव एण्ड काउण्टर पर्सपेक्टिव'' रोटलेज प्रकाशन, नई दिल्ली 2013 में विभिन्न विद्वानों के लेखों के द्वारा भारत में माओवाद के परिचय, वास्तविकता, खनन एवं पर्यावरण, संभावित उपाय, माओवाद से निपटने की रणनीति, विधि के शासन तथा संवैधानिक अधिकारों की चर्चा की है।

डॉ. कुसुम लूनिया ने अपना उपन्यास 'शिखर तक चलो' विद्या विहार नई दिल्ली 2013 में वर्तमान युग

की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक दशाओं का सजीव चित्रण किया है। उपन्यास का अंतिम ध्येय नक्सलवाद जैसी अमानवीय गतिविधियों की समस्याओं पर पाठक का ध्यान आकर्षित करना रहा है। उपन्यास में नक्सलवाद एवं नक्सलवादियों द्वारा किये जा रहे अमानवीय कृत्यों जैसे जघन्य अपराधों का विस्तृत वर्णन है।

नक्सलवाद का प्रांरभ

18 मार्च, 1967 को पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलबाड़ी गाँव में 'सिलिगुडी किसान सभा' नामक किसान संगठन (जिसका नेतृत्व आदिवासी नेता जंगल संथाल कर रहे थे) ने घोषणा की कि 'सशस्त्र संघर्ष के द्वारा स्थानीय जमींदारों से भूमि छीनकर उसे भूमिहीनों में बाँटकर दशकों पुराने शोषण का अंत किया जायेगा।' नक्सलबाड़ी क्षेत्र की जनसंख्या में आदिवासियों एवं भूमिहीन श्रमिकों का बहुमत था। यहाँ भूमि को लेकर छोटे–मोटे संघर्ष जारी थे लेकिन 23 मई 1967 को बड़ी घटना हुई जब बिबूल किसान नामक व्यक्ति को फसल की हिस्सेदारी को लेकर खेत में प्रवेश करने पर स्थानीय जमींदार के गुंडों ने उसे पीट–पीटकर मार डाला।

24 मई, 1967 को भूमिगत नेताओं को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस पहुंच गई, पुलिस और किसानों की मुठभेड़ हुई, इसमें सोनम बांग्दी नामक दरोगा मारा गया। 25 मई 1967 को पुलिस कार्यवाही के विरोध में नक्सलबाड़ी में हो रही बैठक पर पुलिस द्वारा हमला करने से 11 लोग मारे गए जिनमें सात महिलाएँ एवं दो बच्चे भी शामिल थे।[3]

नक्सलबाड़ी के संघर्ष के पश्चात शहरी मध्यम वर्ग ने इसका समर्थन किया। कलकत्ता की प्रेसीडेंसी कॉलेज एवं जादवपुर विश्वविद्यालय नक्सलवादी आंदोलन के शैक्षणिक केन्द्र बन गए। जुलाई, 1967 से पश्चिम बंगाल की संयुक्त मोर्चा सरकार ने नक्सलवाड़ी के आंदोलन कर्ताओं के दमन का अभियान चलाया। पुलिस की सहायता से जोतदारों के हथियार बंद दस्तों ने गाँवों में हमले शुरू कर दिए किसानों ने भी छापामार ढंग से प्रतिरोध प्रारम्भ कर दिया। चारू मजूमदार, कानू सान्याल, जंगल संथाल, कदम मलिक एंव खोखन मजूमदार आदि ने नक्सलवादी संघर्ष में अहम भूमिका निभायी। निर्दयता से कुचलने से आंदोलन बँगाल के अन्य भागों बिहार एवं आँध्रप्रदेश के श्री काकूलम क्षेत्र में फैल गया। नक्सलवादी संघर्ष के कारण सी.पी.आई (एम) में विरोधी स्वर उठने लगे एवं ंचारू मजूमदार, सोरेन बोस, सुशीतल राय चौधरी आदि को पार्टी से अलग कर दिया।

मई, 1968 में नक्सलवाड़ी संघर्ष से जुड़े नेताओं के नेतृत्व में 'ऑल इंडिया कोआर्डिनेशन कमेटी ऑफ कम्युनिस्ट रिवोल्यूशनरीज' (ए.आई.सी.सी.सी.आर.) की स्थापना की गई। इस संगठन का सक्ष्य था माओ–त्से–तुग की विचारधारा को बढ़ावा देने के लिए क्रांतिकारी किसान व लोकतांत्रिक संघर्षों को उभारना तथा गुरिल्ला रणनीति अपनाना।

पश्चिम बंगाल से शुरू होने वाला नक्सलवादी आंदोलन आज देश के 22 राज्यों के लगभग 220 जिलों में फैल चुका है। छत्तीसगढ़, झारखंड एवं उड़ीसा की स्थिति गंभीर है। 1967 में पश्चिम बंगाल में शुरू किया गया आंदोलन पुलिस कार्यवाही एवं सरकार के भूमि सुधारों जैसे प्रयासों के कारण इस राज्य में क्षीण हो गया लेकिन देश के अन्य भागों में फैल गया। विभिन्न राज्यों में नक्सलवाद का विस्तार इस प्रकार हैः–

आँधप्रदेश

चारू मजूमदार की मृत्यु के पश्चात आंधप्रदेश में कोंडापल्ली सीतारमैया की अध्यक्षता में आंदोलन को चलाने के लिए एक केन्द्रीय संगठन समिति स्थापित की गई। सीतारमैया ने हथियार एकत्र करने का प्रयास किया और पुलिस ने उन्हें हिरासत में ले लिया। 1980 में उन्होंने अलग होकर 'पीपुल्स वार ग्रुप' की स्थापना की। तेलंगाना और श्रीकाकुलम में जनजातीय व दलित समुदाय का शोषण जारी था इसलिए वहाँ नक्सलवाद के पनपने के लिए आदर्श स्थितियाँ मौजूद थी। 1992 में मुपल्ला लक्ष्मण राव उर्फ गणपति को पीपुल्स वार ग्रुप की कमान सौंपी गई। पीपुल्स वार ग्रुप का प्रभाव आंध्रप्रदेश, दक्षिणी छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, कर्नाटक, तमिलनाडु के कई क्षेत्रों में था। आंध्रप्रदेश में हिंसा बहुत अधिक बढ़ रही थी। इससे निपटने के लिए भारत सरकार की तरफ से एक समिति का गठन किया गया। इसमें 'पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज' के अध्यक्ष के.जी. कन्नाबरन, अकादमिक विशेषज्ञ, न्यायविद्, मीडिया तथा राजनीतिक प्रतिनिधि शामिल थे।

इन्होंने पीपुल्स वार ग्रुप और आंध्रप्रदेश सरकार से बातचीत करने के लिए विशेष प्रयास किये। प्रतिक्रियास्वरूप आंध्रप्रदेश सरकार ने 'ग्रेहाउण्ड् फोर्स' के गठन के साथ आत्मसमर्पण एवं पुर्नवास जैसे अनेक कल्याणकारी कार्य प्रारंभ किये। जिससे आंदोलन राज्य में कमजोर पड़ता चला गया एवं समीपवर्ती मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र एवं उड़ीसा में फैल गया।

छत्तीसगढ़

वर्तमान समय में छत्तीसगढ़ नक्सलवाद का केन्द्र बना हुआ है। छत्तीसगढ़ के भीतर सबसे उपेक्षित क्षेत्र है– बस्तर की पुरानी रियासत का इलाका और दंतेवाड़ा। पीपुल्स वार ग्रुप और एम.सी.सी. के विलय से पहले इसके कार्यकर्ताओं ने आंध्रप्रदेश, बिहार, झारखंड में दबाव पड़ने पर इन्हीं दंतेवाड़ा–अबूझमाड़ के जंगलों में शरण ली। छत्तीसगढ़ में नक्सली जनजातियों के पास मित्र बनकर आये लेकिन धीरे–धीरे वे उन पर प्रभुत्व कायम करने लगे। ठेकेदारों और व्यापारियों से नियमित वसूली शुरू कर दी गई और विकास पर रोक लगा दी गई। विशेषकर सड़कों, पुलों, हैण्डपम्पों, स्कूलों और पंचायत घरों के निर्माण का नक्सलियों ने भारी विरोध किया। उन्हें लगा इनसे उनके प्रभुत्व को चुनौती मिलेगी। महेन्द्र कर्मा के नेतृत्व में 2005 में सलवा जुडुम अभियान शुरू किया गया। सलवा जुडुम अभियान में विशेष पुलिस अधिकारी के तौर पर 5000 लोगों को नियुक्त किया गया था। सरकार ने नक्सलियों से निपटने के लिए कठिन प्रयास किये लेकिन दूरगामी और स्पष्ट रणनीति के अभाव में असफल रहे।

झारखंड

झारखंड को नक्सलवाद की समस्या बिहार से विरात में मिली है। झारखंड के 23 जिले में से 16 जिले

नक्सलवाद से प्रभावित है। उन जिलों में चतरा, गिरीडीह, हजारी बाग, बोकारों, धनबाद, रांची, लोहरदग्गा, गुमला, सिमडेगा, लातेहार, पाकुड़, साहेबगंज, पलामू, गढ़वा, दुमका इत्यादि प्रमुख जिला है। झारखंड में नक्सलवाद के लिए अनुकूल स्थिति पैदा करने वाले कारकों में अल्प एवं अनिश्चित श्रमिक, ठेकेदारी प्रथा, बिचौलियावाद, माफिया अर्थव्यवस्था, कमजोर वर्ग का आर्थिक एवं सामाजिक शोषण, अशिक्षा एवं प्रशासनिक असफलता आदि प्रमुख हैं।[4]

उत्तरप्रदेश एवं उत्तराखण्ड

पूर्वी उत्तरप्रदेश में नक्सलवाद का उत्थान 1990 के दशक के अंतिम वर्षों से चंदौली जिले के नौगढ़ प्रखण्ड में एवं सोनभद्र जिले के नगवा प्रखण्ड में माओवादियों की गतिविधियाँ देखने में आयी। ये दोनों प्रखण्ड बिहार और झारखण्ड से सटे हुए हैं और यहाँ आदिवासियों की संख्या बहुतायत में है। ये आदिवासी जंगलों से तेंदू पत्ते, महुआ और जलावन की लकड़ी बटोरकर अपनी जीविका चलाते हैं। जंगलात विभाग माफिया तत्वों से मिलकर इन आदिवासियों से जंगल पर उनका परम्परागत अधिकार छीनने की कोशिश कर रहा है। नक्सलियों ने इन व्याधियों के खिलाफ लड़ने का निश्चय किया और कई जंगलात अधिकारियों को मारा और उनकी हत्या कर दी। अभी भी पूर्वी उत्तरप्रदेश के कुछ जिले जो नक्सल प्रभावित अन्य राज्यों से सटे हुए हैं, उनमें नक्सली घटनाएँ होना आम बात है। क्योंकि नक्सली अपने क्षेत्र में वारदात कर छुपने के लिए सीमा पर अर्थात् उत्तर प्रदेश के आदिवासी इलाकों को अपना ठिकाना बनाते हैं। उत्तरप्रदेश के सोनभद्र, गोरखपुर, गाजीपुर, बलियां, चंदौली और मिर्जापुर के पूर्वी जिलों में नक्सली गतिविधियाँ देखी जा सकती है।[5]

उत्तराखण्ड राज्य की 275 किमी लंबी सीमा नेपाल से मिली हुई है, इससे संवेदनशील को बढ़ावा मिल रहा है। खुफिया सूत्रों का मानना है कि उत्तराखण्ड दो वजह से नेपाल के माओ विद्रोहियों के लिए बेहतर शरण स्थल है, क्योंकि यह नेपाल से सटा है और सीमा खुली होने से आवाजाही में उन्हें कोई परेशानी नहीं होती है। नेपाल नक्सलवादी अब उत्तरांचल के लिए खतरा बनने लगे हैं। वे भारतीय माओवादियों से समन्वय कर रहे हैं।

बिहार

साठ के दशक के अन्त में और सत्तर के दशक के आरंभ में नक्सलबाड़ी के विद्रोह से प्रेरणा पाकर बिहार में सर्वप्रथम मुजफ्फरपुर जिला, लखनौरी गांव के भूमिपति सत्यनारायण सिंह के विरूद्ध नक्सली आंदोलन प्रारंभ हुआ पर कुछ समय बाद ही पुलिस दमन और जयप्रकाश नारायण के प्रयासों से यह आंदोलन धराशाही हो गया। उसके बाद सी.पी.आई. (एम.एल.) ने उत्तर बिहार के पूर्णिया, दरभंगा, भागलपुर, मुंगेर आदि जिलों में किसान संघर्ष को फैला देने की कोशिश की किन्तु विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई। बल्कि अप्रत्याशित रूप से दक्षिण बिहार के भोजपुर में और पटना जिले में यह आंदोलन गति पकड़ने लगा। बिहार में जातिगत हिंसा ने इस आंदोलन को बढ़ावा दिया।[6]

महाराष्ट्र के भंडारा, गोण्डिया, बालाघाट से पेच राष्ट्रीय उद्यान, नागजिरा वन्यजीव अभ्यारण्य तक के वन क्षेत्र को नक्सलवादी सुरक्षित स्थली के रूप में स्थापित कर रहे हैं। पंजाब एवं हरियाणा में भी माओवादियों के प्रभाव के साक्ष्य मिल रहे हैं। पंजाब के पुलिस महानिदेशक के अनुसार 'पंजाब के श्रमिक असंतोष उपद्रव में नक्सलियों का हाथ है। मलवा, मजवा, धुरी, बर्नाला, जालंधर, फिरोजपुर, मनसा एवं भटिंडा में इनका प्रभाव बढ़ रहा है।' हरियाणा के यमुना नगर, नरवाना, कैथल, कुरूक्षेत्र एवं करनाल में भी माओवादियों की गतिविधियाँ की रिपोर्ट की गई है। नक्सलवादी दक्षिण भारत में भी अपना प्रभाव बढ़ा रहे हैं। उड़ीसा के मलकानगिरी, कोरापुट एवं आंध्रप्रदेश के खम्मम एवं वारंगल जिले इसमें शामिल है। केरल के कन्नूर, वायानाड़, कर्नाटक के दक्षिण कन्नड़, उडूपी, कोडयू एवं तमिलनाडु के गुडालूर जिलों को नक्सलवादी स्पेशल जोनल कमेटी में शामिल करने के लिए कोशिश कर रहे हैं। शहरी क्षेत्रों में अपना आधार बनाने के लिए नक्सलवादी अहमदाबाद, पूर्व कोरिडोर, दिल्ली क्षेत्र में प्रयासरत है।

देश के नक्सल प्रभावित प्रमुख राज्य एवं जिले

आंध्रप्रदेश

अनंतपुर, आदिलाबाद, पूर्वी गोदावरी, गुंटूर, करीमनगर, खम्मा, कुर्नूल, मेडक, महबूबनगर, नलगोड़ा, प्रकाशम, श्रीकाकुलम, विशाखापतनम, विजयनगरम, वारंगल, निजामाबाद।

बिहार

अखल, औरंगाबाद, भोजपुर, पूर्व चम्पारण, गया, जमुई, जहानाबाद, कैमूर, मुंगेर, नालंदा, नवादा, पटना, रोहतवास, सीतामढ़ी, पश्चिमी चंपारण।

छत्तीसगढ़

बीजापुर, दंतेवाड़ा, जसपुर, कांकेर, कोरिया (बैकुंठपुर), जगदलपुर, नारायणपुर, राजनंदगांव, सरगुजा, बस्तर के करीब का सुकमा इन दिनों माओवादियों की हिंसा की व्यापक चपेट में है।

झारखण्ड

बोकारो, चतरा, धनबाद, पूर्वी सिंह भूमि, गढ़वा, गिरीडीह, गुमला, हजारीबाग, कोडूरमा, लातेहार, लोहरदंगा, पलामू, रांची सिमड़ेगा, सराईकेला, पश्चिमी सिंह भूमि, खूंटी, रामगढ़।

मध्यप्रदेश

बालाघाट।

महाराष्ट्र

चन्द्रापुर, गढ़चिरौली, गौंडिया।

ओडिशा

गजपती, गंजम, क्योंझर, कोरापुत, मलकानगिरी, मयूरभंज, नवरंगपुर, रायगंझ, संबलपुर, सुंदरगढ़, नयाग्राम, कंधमाल, देवगढ़, जाजपुर, धनकमाल।

उत्तरप्रदेश

मिर्जापुर, चंदौली, सोनगढ़।

पश्चिम बंगाल

बंकुरा, मिदिनापुर, पुरूलिया।[7]

प्रकृति एवं स्वरूप

नक्सली आंदोलन का उद्देश्य गरीब कृषकों की समस्याओं को दूर करना था। उनके समर्थन में स्थानीय स्तर पर भू–स्वामियों का संगठित विरोध करना था। चीनी दर्शन से प्रभावित होकर वे हिंसक संघर्ष पर उतर आये और इन्होंने समाज के गरीब, भूमिहीन, कृषक मजदूरों तथा जनजातीय लोगों के बीच अपने आधार का निर्माण किया। नक्सलवादी समस्या का प्रकृति एवं स्वरूप इस प्रकार है–

1. नक्सलवादी विचारधारा लोकतांत्रिक प्रक्रिया से बदलाव की पक्षधर नहीं है।
2. माओवादी पार्टी की सर्वसत्तावादी व्यवस्था स्थापित करना चाहते हैं।
3. वस्तुतः ये अलगाववादी नहीं है। जम्मू कश्मीर तथा पूर्वोत्तर क्षेत्रों के उग्रवादी संगठनों की मांगों के विपरीत ये कोई अलग देश की मांग नहीं कर रहे हैं, बल्कि इसी देश में समस्त व्यवस्था में पूर्णरूपेण क्रांतिकारी परिवर्तन चाहते हैं।
4. नक्सलवाद की आतंकवाद से तुलना नहीं की जा सकती। नक्सलवाद का मूल स्वर व्यवस्था परिवर्तन करना है। नक्सलवाद के नाम पर फैली बर्बरताओं के बावजूद यह आंदोलन विकास की बहुआयामी समस्याओं के पक्ष में लड़ाई लड़ रहा है।
5. पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह एवं तत्कालीन गृह मंत्री पी.चिदम्बरम ने नक्सलवाद को कानून एवं व्यवस्था की समस्या माना है। माओवाद कानून एवं व्यवस्था की भी समस्या है। इसे कानून व व्यवस्था की समस्या न मानने के भी अपने परिणाम हैं।
6. श्री मनींद्र नाथ ठाकुर के अनुसार स्थापित अवधारणा से नक्सलवाद को नहीं समझा जा सकता। केवल विचारधारा या कानून व्यवस्था की समस्या के आधार पर भी इस मुद्दे को समझना मुश्किल है। मार्क्सवादी इसे व्यवस्था परिवर्तन के लिए संघर्ष मानते हैं जबकि पूंजीवादी दृष्टिकोण इसे कानून व्यवस्था मसला समझता है।[8]
7. महाश्वेता देवी के अनुसार जिसे नक्सलवादी गतिविधि करार दिया जा रहा है, वह सरकारी उत्पीड़न के खिलाफ बिल्कुल निचले स्तर पर जीवन जीने को विवश किये गये लोगों की स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। अब उस प्रतिक्रिया को कोई नक्सलवादी गतिविधि कहें तो इसमें कोई क्या कर सकता है।[9]
8. डॉ. कुसुम लूनिया जिन्होंने नक्सलवाद पर आधारित उपन्यास 'शिखर तक चलो' का प्रणयन किया है। उनका मानना है कि नक्सलवाद के मूल में कोई कानून व्यवस्था की समस्या नहीं, बल्कि मुख्य रूप से राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक समस्या रही है जो दूरदर्शिता के अभाव में परिवर्तित हुई है। आदिवासियों को देश की मुख्य धारा से नहीं जोड़ा गया, राष्ट्र विरोधी अलगाववादी ताकतों ने उन्हें हवा देकर नक्सलवादी बनने में सहायता की है।
9. अरूंधति राय के अनुसार यह अमीर तबके का गरीबों के खिलाफ युद्ध है, जिसमें अमीर वर्ग गरीबों (आदिवासियों) से लड़ने के लिए गरीबों (सुरक्षा बलों के जवान) का इस्तेमाल कर रहा है। सी.आर.पी.एफ. केवल माओवादियों ही नहीं वरन् ढांचागत हिंसा की भी शिकार हो रही है। भारत उच्च एवं मध्यम वर्ग का ही लोकतंत्र बनकर रह गया है, जो आमजन हेतु कार्य नहीं कर रहा है। कोई भी संस्था (चुनाव, न्यायपालिका, विधायिका, मीडिया आदि) गरीब तक नहीं पहुँच पा रही है।[10]
10. नक्सलवादी विचारधारा हिंसक तरीके से सत्ता परिवर्तन करना चाहती है।

नक्सलवाद हेतु उत्तरदायी कारण

शोषण और भ्रष्टाचार में लिप्त हमारी सामाजिक व्यवस्थाओं के विरोधस्वरूप उत्पन्न विद्रोहपूर्ण विचारधारा से प्रारंभ होकर एक जन आंदोलन के रूप में विकसित होते हुए आतंक के पर्याय बने 'नक्सलवाद' ने बंगाल से लेकर संपूर्ण भारत में आज अपने पैर पसार लिये हैं। यह कटु सत्य है कि भ्रष्टव्यवस्था और पतित नैतिक मूल्यों के प्रतिकार से अस्तित्व में आये नक्सलवाद को आज भी वास्तविक पोषण हमारी व्यवस्था द्वारा ही मिल रहा है। व्यवस्था, जिसमें हम सबकी भागीदारी हे। सरकार की भी और समाज की भी। इस समस्या को पूरी तरह जानने, समझने के लिए इसके उत्तरदायी कारकों को जानना बहुत जरूरी है जो इस प्रकार है–

भूमि संबंधी कारक

नक्सलवादी आंदोलन की शुरूआत ही भूमि विवाद से हुई है। सरकार की ओर से भूमि वितरण का ईमानदारीपूर्वक से प्रयास नहीं किया गया। जमींदारी उन्मूलन के बाद जमीनों का पुनर्वितरण का कार्य भी सही ढंग से नहीं किया गया। वास्तव में भूमिहीन व्यक्तियों को जो जमीन वितरित की गई वह मात्र कागजी कार्यवाही ही रही, भूमिहीनों को जमीन का मालिकाना हक मिल जाने के बावजूद उस पर भूस्वामियों का ही कब्जा रहा। भूमि सुधार कानून ने गरीबों के मन में आशा जगायी थी और जब आशाओं पर पानी फिर गया तो उनमें असंतोष की आग भड़क उठी। भूमि सुधारों का सही ढंग से अनुपालन नहीं होने से नक्सलवाद की समस्या को बढ़ावा मिला है।

सामाजिक विषमता एवं अत्याचार

सामाजिक विषमता ही वर्ग संघर्ष की जननी है। आजादी के बाद भी इस विषमता में कोई कमी नहीं आयी। बिहार के नक्सलवादी आंदोलन में सामाजिक विषमता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जाति बिहार की बड़ी समस्या रही है। जाति राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक सत्ता का संचालन करती है। जमींदार जाति की भावना को उभार कर सेनाए गठित करते रहे हैं। भूमि सेना, लोरिक सेना, रणवीर सेना आदि का आधार जाति ही रही है। उच्च जाति के पुरूषों द्वारा दलित समुदाय की महिला श्रमिकों का शारीरिक एवं मानवीय शोषण पूरे भारत में देखा जा सकता है। जाति, धर्म, लिंग आदि के आधार पर भेदभाव का संविधान के अनुच्छेद 14 से 17 के तहत निषेध किया गया है। फिर भी यह मौजूद है। पुलिस एवं प्रशासन में उच्च जाति के कारण अनुसूचित जाति, जनजाति (अत्याचार से रोकथाम) अधिनियम 1989 भी दलित एवं आदिवासियों के शोषण को नहीं रोक पा रहा है।

विस्थापन संबंधी कारण

आदिवासियों का अपनी भूमि से विशेष लगाव होता है, वे इसकी रक्षा के लिए अपनी जान भी दे सकते हैं। इनके लिए भूमि केवल आजीविका स्रोत ही नहीं है, वरन् परम्परा, संस्कृति एवं धार्मिक क्रियाओं का भी स्रोत है। इसके अधिग्रहण ने इनमें असंतोष बढ़ाया है। जनजातीय क्षेत्रों में रोजगार के साधनों पर गैर आदिवासियों के कब्जे से समस्या और बढ़ी है। जनवरी 2008 से लागू वनाधिकार एक्ट 2006 के द्वारा प्रथम बार आदिवासी समुदायों के लिए भूमि का अधिकार सुनिश्चित किया गया है, लेकिन इसके असफल कार्यान्वयन से समस्या लगातार बनी हुई है। आदिवासियों के लिए भूमि केवल उत्पादन की वस्तु नहीं है वरन् इसका आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व भी है। भूमि में वन केन्द्रीय भूमिका अदा करते हैं। नक्सलियों ने आदिवासियों को उनकी भूमि वापस दिलाने का वादा किया है, इसलिए स्थानीय लोग नक्सलियों का समर्थन करते हैं। वहीं राज्य अपनी इस भूमिका से विमुख हो चुका है।

सरकारी नीतियों के क्रियान्वयन में कमी

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सरकार द्वारा अपनायी गई विकास की प्रक्रिया ने अनेक समस्याएँ उत्पन्न की। बंगाल में 1943 में पड़े सूखे के दौरान उड़ीसा के कालाहाँड़ी जिले से चावल भेजे गए थे। योजना आयोग के 1954 के सर्वे के अनुसार इस जिले में लोगों का औसत स्वास्थ्य एवं रोजगार की दशा बेहतर थी। आज यह जिला देश के सबसे पिछड़े एवं गरीब जिलों में शामिल है। जबकि पिछले दशकों में यहाँ अनेक खनन परियोजनाऐं एवं उद्योग स्थापित किए गए हैं। साथ ही मनरेगा जैसे कार्यक्रम भी चल रहे हैं। ये हमारी विकास प्रक्रिया में खामियों को दर्शाता है, इससे यह दृष्टिगत होता है कि सरकारी उपेक्षा एवं भ्रष्टाचार के कारण समृद्ध क्षेत्र भी पिछडे क्षेत्र में तब्दील हो सकता है।

रामचन्द्र गुहा के अनुसार, प्रायद्वीपीय भारत के आदिवासी पिछले 6 दशकों से लोकतांत्रिक विकास से पीड़ित रहे हैं। इस काल में अर्थव्यवस्था एवं राजव्यवस्था के द्वारा उनका लगातार शोषण होता रहा है। ये समुदाय मुस्लिम एवं दलितों से भी पिछड़ा है। राजनीतिक दृष्टि से भी आदिवासी अदृश्य ही रहे हैं। महाराष्ट्र के यवतमाल जिले के भानब गांव के दत्ता चौहान नामक किसान ने 5 नवम्बर 2013 को, जुलाई 2013 में आयी बाढ़ से फसल नष्ट हो जाने पर सरकार द्वारा किसी प्रकार का मुआवजा नहीं देने के कारण आत्महत्या कर ली। यवतमाल के कलेक्टर अश्विन मुद्गल के अनुसार वह स्वयं संबंधित विभाग को मुआवजा हेतु 12 से अधिक बार पत्र लिख चुके हैं।[11] सरकार पीड़ित किसानों तक समय पर मुआवजा नहीं पहुंचा पा रही थी। जो मुआवजा दिया जा रहा था, वह बेहद कम एवं देरी से मिलता था। अनेक बार सरकार मुआवजे की घोषणा कर देती है, लेकिन मुआवजा उस तिथि से नहीं मिलता।

पेशा कानून

आदिवासी जनता का लोकतांत्रिक व्यवस्था में विश्वास है। राष्ट्र निर्माताओं ने इसी कारण उनकी रक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की। औपनिवेशिक कानूनों में समुदाय के रीति रिवाज और गाँव गणराज्य के अलिखित नियमों के लिए थोड़ी भी जगह नहीं थी। ऐसी विसंगति से उभारने के लिए ही राज्यपालों को असीमित शक्तियाँ दी गई है। पेसा यानि प्रोविजन ऑफ पंचायत (एक्सटेंशन टू द शिडयूल्ड एरिया, 1996) नाम का अधिनियम ऋणदाता की तरह सामने आया। इस कानून की रचना आदिवासियों के साथ हुये अन्याय के खात्मे के लिए की गई थी।[12]

वनवासियों को भूमि के अधिकार देने के लिए वनाधिकार एक्ट 2006 को एक जनवरी 2008 से लागू किया गया। इसके तहत प्रति परिवार को चार हैक्टेयर भूमि वितरित करने का प्रावधान है। घने वन एवं पहाड़ी स्थूलाकृति के क्षेत्रों में कृषि भूमि के अभाव के कारण वनवासियों को आजीविका हेतु उन्हें भूमि का स्थायी अधिकार देना आवश्यक है। वनाधिकार एक्ट को लागू किए हुये 9 वर्ष गुजर चुके हैं। लेकिन इसका कार्यान्वयन संतोषजनक नहीं है।

गरीबी

नक्सली आंदोलन से जुड़े अधिकतर कार्यकर्ता दलित एवं आदिवासी समुदाय से ही संबंधित है। देश की 25 प्रतिशत जनसंख्या इन समुदायों से ही संबंधित है, जो मुख्यतः गाँवों में रहते हैं। अनुसूचित जाति में गरीबी, निरक्षरता, बेरोजगारी, सामाजिक भेदभाव जैसी समस्याएँ हैं। वहीं अनुसूचित जनजाति, अशिक्षा, कुपोषण, संसाधनों की समाप्ति जैसी समस्याओं से ग्रसित है। गरीबी ने नक्सलवादियों को अपने संगठन से लोगों को जोड़ने की प्रक्रिया को आसान किया है। गरीबी से सामाजिक वंचना को बढ़ावा मिलता है। न्याय नहीं मिलना, मानव गरिमा की उपेक्षा, उत्पीड़न समाज से अलगाव सरकार की अनुपस्थिति एवं राज्य की शोषणकारी प्रतिक्रिया आदि कारकों ने मध्य एवं पूर्वी भारत के अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्गों को माओवाद से जुड़ने में योगदान दिया है। सरकार की अनुपस्थिति में नक्सलवादी गरीब, उपेक्षित, शोषित एवं अशिक्षित समुदायों को संगठित करने में सफल रहे।

आजीविका संबंद्ध कारण

नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों में लोगों की आजीविका पूरी तरह कृषि एवं जंगलों की उपज पर आधारित रही है। इनकी आजीविका पर संकट आने से ही यहाँ नक्सलवाद के लिये परिस्थितियाँ बनी है। साँझा सम्पत्ति संसाधन ग्रामीण क्षेत्रों में अर्थव्यवस्था एवं आजीविका का आधार रहे हैं। इसमें ग्रामीण चारागाह, तालाब, नदियां, वन क्षेत्र, व्यर्थ भूमि, जल एवं वनस्पति संबंद्ध संसाधन शामिल हैं। साँझा सम्पत्ति संसाधनों में कमी का असर अनुसूचित जाति एवं जनजाति पर सर्वाधिक पड़ा है। इनकी आजीविका में कमी के कारण इनके स्वास्थ्य एवं अर्थव्यवस्था पर भी नकारात्मक असर पड़ा है।

सरकारी उपेक्षा प्राकृतिक संसाधनों एवं आजीविका के स्रोतों में कमी के कारण छत्तीसगढ़ के जशपुर जिले में बसने वाली असुर जनजाति की जनसंख्या मात्र 285 ही रह गई है। यह जनजाति परम्परागत व्यवसाय, पत्थरों को गलाकर सोना बनाने का कार्य करती थी। नई तकनीक के आने से इसके रोजगार के साधन

समाप्त हो गये हैं। वही सरकार इन्हें आजीविका के वैकल्पिक स्रोत उपलब्ध नहीं करवा पायी है।[13]

आधारभूत ढाँचे का अभाव

किसी भी क्षेत्र के विकसित होने की निशानी वहाँ का आधारभूत ढाँचा होता है। आधारभूत ढाँचे में स्वास्थ्य सुविधाएं, सड़कें, शिक्षा, खाद्यान आपूर्ति को शामिल किया जाता है। देश की 31 प्रतिशत शहरी जनसंख्या की स्वास्थ्य की देखभाल के लिये कुल स्वास्थ्य कर्मियों का 65 प्रतिशत मौजूद है, वहीं 69 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या के लिए मात्र 35 प्रतिशत स्वास्थ्य कर्मी कार्यरत है जिनमें भी अनुपस्थिति की दर अधिक पाई जाती है। सामान्य जनसंख्या की अपेक्षा एस.सी. या एस.टी. की स्वास्थ्य दशा बदतर है एवं सामान्य क्षेत्रों की अपेक्षा नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में यह स्थिति और अधिक गंभीर है।

भ्रष्टाचार के कारण माओवाद प्रभावित क्षेत्र में खाद्यान आपूर्ति की स्थिति बेहतर नहीं रही है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पी.डी.एस.) में भ्रष्टाचार के चलते स्थानीय लोगों को इसका अधिक लाभ नहीं मिला है। नक्सलियों के बढ़ते प्रभाव के साथ यह समस्या और अधिक गंभीर हुई है। अब दूरस्थ क्षेत्रों में खाद्यान आपूर्ति सुरक्षा बलों के जरिए की जाती है।

नक्सलवादी क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति ठीक नहीं है और इसके पीछे नक्सलवादी एवं सरकारी तंत्र दोनों जिम्मेदार है। आदिवासी इलाकों में जिन बच्चों की उम्र स्कूल जाने लायक है, वे इधर उधर भागते फिरते हैं। स्थानीय भाषा में शिक्षा की व्यवस्था नहीं है। शिक्षा से व्यक्ति में समझ का विकास होता है। शिक्षा ज्ञान का प्रकाश पुंज है। जो अपनी रोशनी चारों और फैलाती है। शिक्षा के अभाव की वजह से भी आदिवासी नक्सलवाद की जमात में शामिल होते जा रहे हैं।

संबंधित संवैधानिक प्रावधानों की उपेक्षा

42वें संविधान संशोधन के द्वारा समाजवाद को संविधान की उद्देशिका में शामिल किया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने भी समाजवाद को संविधान के मूल ढाँचे का हिस्सा माना है। पिछले तीन दशकों में असमानता बढ़ी है जो पूंजी एवं संसाधनों का केन्द्रीकरण कुछ ही लोगों में होता जा रहा है। यह दर्शाता है कि वर्तमान में समाजवाद केवल दिखावा बनकर रह गया है जिसने नक्सलवाद समस्या को पनपने में मदद की है।

संविधान के अनुच्छेद 244 में अनुसूचित एवं जनजाति क्षेत्रों में प्रशासन का प्रावधान किया गया है। संविधान की पांचवीं अनुसूची में असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्य को छोड़कर अन्य राज्यों के अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण के प्रावधानों के तहत राज्यपालों को विशेष शक्तियाँ दी गई है। अनुच्छेद 275 (1) के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों के कल्याण में अभिवृद्धि हेतु अनुदान का प्रावधान किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 342 में अनुसूचित जातियों का वर्णन है।

ऐसे अनेक प्रावधान है जो आदिवासियों के कल्याण हेतु किए गए हैं लेकिन इस समुदाय को इससे अधिक लाभ नहीं हुआ है।

नक्सलवादी आंदोलन के निराकरण के प्रयास

सरकार द्वारा नक्सलवादी आंदोलन की चुनौती से निपटने के लिए सुरक्षात्मक, विकासात्मक, आदिवासियों के कल्याण हेतु उपाय एवं राजनीतिक प्रयास किए जा रहे हैं जिनमें से सरकार को कुछ में सफलता भी प्राप्त हुई है।

सुरक्षात्मक प्रयास

सरकार ने देश के सीमावर्ती राज्यों खासतौर से पश्चिम बंगाल, बिहार और उड़ीसा के नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सेना की सहायता से संयुक्त अभियान प्रारंभ किया। ये अभियान 1 जुलाई से 15 अगस्त 1971 तक चले और इन्हें 'ऑपरेशन स्टीपलचेंज' का कोड नाम दिया गया। इसकी मुख्य विशेषता यह थी कि इसके द्वारा एक क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा मजबूत घेरेबंदी कर ली जाती थी और उसके आने जाने के सारे रास्ते बंद कर दिये जाते थे।

केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों की तैनाती

वर्तमान में केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों की 81 बटालियनें आंध्रप्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, ओड़िसा, उत्तरप्रदेश राज्यों में पुलिस की सहायता हेतु तैनात हैं।

कोबरा बटालियन

केन्द्रीय पुलिस बल के भाग के रूप में प्रशिक्षित और सुरक्षित 'कमाण्डो बटालियन फॉर रिजोल्यूट एक्शन (कोबरा) नामक विशेषज्ञ बल की बटालियनों का गठन विद्रोही रोधी और जंगल युद्ध कार्रवाइयों के लिए किया गया है।

सुरक्षा संबंधी व्यय (SRE) योजना

इस योजना के अन्तर्गत केन्द्र सरकार सुरक्षा बलों के अनुग्रह भुगतान, प्रशिक्षण तथा संचालनात्मक आवश्यकताओं से संबंधित व्यय के साथ–साथ संबंधित राज्य सरकार की समर्पण तथा पुर्नवास नीति के अनुरूप आत्मसमर्पण करने वाले नक्सलवादी कैडरों, सामुदायिक पुलिस व्यवस्था, ग्राम रक्षा समितियों के लिए सुरक्षा संबंधी अवसंरचना तथा प्रचार सामग्री के लिए सहायता की प्रतिपूर्ति करती है।

सी.आई.ए.टी. विद्यालय

11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 20 विद्रोही रोधी और आतंकवाद–रोधी **(CIAT)** का अनुमोदन किया गया जिनमें से 15 नक्सल प्रभावित राज्यों में स्थापित की जा रही है। राष्ट्रीय तकनीकी अनुसंधान संगठन **(NTRO)** सुरक्षा बलों को ड्रोन **(UAV)** के जरिए तकनीकी सहायता उपलब्ध करा रहा है।

सलवा जुडुम

नक्सली समस्या से निपटने के लिए छत्तीसगढ़ सरकार ने 2005 में कांग्रेसी विधायक महेन्द्र कर्मा के नेतृत्व में सलवा जुडुम कार्यक्रम की शुरूआत की जिसके तहत ग्रामीणों को उनके मूल स्थान से हटाकर राहत शिविरों में रखा गया। जहाँ पुलिस एवं सलवा जुडुम कार्यकर्ता सुरक्षा उपलब्ध कराते थे। सलवा जुडुम कार्यक्रम सफल नहीं हो पाया।

विकास संबंधी प्रयास

योजना आयोजना 88 एकीकृत कार्य योजना **(IAP)** के जिलों में महत्वपूर्ण कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की निगरानी कर रहा है और निम्नलिखित योजनाओं की वीडियो कान्फ्रेरेसिंग के माध्यम से इसके कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा भी करता रहा है।

1. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना **(PMGSY)**
2. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन **(NRHM)**
3. आश्रम स्कूल
4. महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी एक्ट
5. सर्व शिक्षा अभियान **(SSA)**
6. राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम **(NRDWP)**
7. राजीव गाँधी ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम **(ळळटल)**
8. एकीकृत बाल विकास सेवाएँ **(ICDS)**
9. इंदिरा आवास योजना **(IAY)**
10. अनुसूचित जनजातियाँ और अन्य परम्परागत वनवासी एक्ट, 2006

नक्सलवादी समस्या से निपटने के सुझाव

1. नक्सलवाद का उदय चूंकि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक कारणों से हुआ है। अतः कानून व व्यवस्था की समस्या मानकर इसका हल नहीं हो सकता। इसके पीछे निहित कारणों को दूर करके ही इस समस्या का समाधान किया जा सकता है।
2. नक्सलवादियों की सामाजिक विघटन की प्रवृत्ति के पीछे आखिर क्या कारण है, यह जानकर ही उन पर नियंत्रण किया जाना चाहिए।
3. इस समस्या के मूल में चूंकि भूमि सुधार की समस्या है, इसलिए भूमि सुधार व वनाधिकार एक्ट 2006 को सही रूप में लागू किया जाना चाहिए।
4. विकास की प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण किया जाये, विकसित क्षेत्रों को छोड़कर, जो क्षेत्र विकास की दृष्टि से पिछड़ा है, उस पर ध्यान केन्द्रित किया जाये।
5. नक्सलवादी समस्या के समाधान के लिए वार्ता की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाये। नक्सलियों से बिना शर्त वार्ता की पेशकश की जाए।
6. आदिवासियों को शिक्षित करने की एवं उन्हें रोजगार उपलब्ध कराने की व्यवस्था सरकार द्वारा की जानी चाहिए।
7. प्राकृतिक संसाधनों पर स्थानीय आदिवासियों को समान अधिकार देकर उनका संरक्षण सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *चन्द्रा, विपिन : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1990*
2. *जोशी, रामशरण : आदिवासी विमर्श, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2013*
3. *श्रीवास्तव, मनोज : नक्सलवाद, कारण, समस्या एवं समाधान, विश्व भारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृ.सं. 16–17*
4. *कुमार, डॉ. प्रकाश : नक्सली जीवन और संघर्ष, प्रगतिशील प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2015*
5. *सेन, अरिंदम : 'पूर्वी उत्तरप्रदेश में माओवाद का उत्थान एवं पतन' समकालीन प्रकाशन, पटना, 2010, पृ.सं. 53–55*
6. *कुंदन, लालेन्द्र कुमार : नक्सलवाद : उद्भव और विकास, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, संस्करण 2010, पृ.सं. 10–11*
7. *सिंह, डॉ. आर.वी.– भारत में आतंकवाद, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2010, पृ.सं. 222*
8. *जनसत्ता, 30 अक्टूबर 2009, मगीन्द्र नाथ ठाकुर*
9. *देवी, महाश्वेता, लालगढ़ के लिए सरकार जिम्मेवार, वर्तिका वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।*
10. *राय, अरूंधति : भूमकाल : साथियों के साथ सफर, माओवाद, हिंसा और आदिवासी, संपादक, राजकिशोर वाणी प्रकाशन।*
11. *सुनील : 'दंतेवाड़ा की जड़े' माओवाद, हिंसा और आदिवासी, पृ.सं. 61, वाणी प्रकाशन, 2010*
12. *शर्मा, बी.डी. : राष्ट्रपति के नाम चिठ्ठी, माओवाद, हिंसा और आदिवासी, पृ.सं. 148–149*
13. *शर्मा, सुनील, हाशिये के बाहर, जनसत्ता, 30 नवम्बर, 2011*